आपने लिखा

आज कक्षा ग्यारहवीं में गुणोत्तर श्रेणी पढ़ते समय एक छात्र ने श्रेणी के लिए सार्व अनुपात इस तरह निकाला,

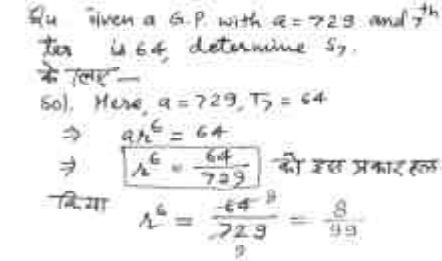

यह छात्र कांकेर ज़िले की एक हाई स्कूल से अच्छे अंकों से दसवीं पास होकर आया है। ऐसी गलती पहली बार देखी। कृपया यह समस्या अपनी गणित टीम के समक्ष उठाइएगा।

रोशन वर्मा, प्राचार्य
शा.उ.मा.वि, सिदेसर
कांकेर, छत्तीसगढ़

छात्र ने सवाल को इस तरह से क्यों हल किया, उससे बातचीत करके या अन्य सवालों के हल के विश्लेषण के ज़रिए यह पता लगाना अत्यन्त महत्वपूर्ण है। कई दफा विद्यार्थी की गलतियों का पैटर्न पकड़ने से समझ में आता है कि दरअसल, दिक्कत कहाँ है।

- सम्पादक मण्डल

संदर्भ का नया अंक-65 देखा। आइंस्टीन और नील बोह्र को दिखाता आवरण और इससे सम्बन्धित सी.पी. स्नो का लेख 'एक दुर्लभ और यादगार पाठ' बहुत ही प्रशंसनीय लगा। आशा है कि शिक्षक पाठ्यक्रम के अलावा इस तरह की अन्य पठन सामग्रियों और विचारों के महत्व को भी समझेंगे।

प्रेमपाल शर्मा
संयुक्त सचिव, रेलवे बोर्ड, दिल्ली

संदर्भ को पहली बार सन् 2007 में एक रविवार को खजूरी बाज़ार के फुटपाथ पर देखा। उलटा-पलटा, पसन्द आई, रख ली और पढ़ी। फिर 'संदर्भ' खरीदने के लिए प्रति रविवार खजूरी बाज़ार जाने लगा। अगस्त 2009 के अंक में 200 रु. में 40 पुराने अंक प्राप्ति का विज्ञापन देखा। राशि भेजने पर बहुत ही सुरक्षित पैकिंग में 40 अंक प्राप्त हुए।

म.प्र. शासन को चाहिए कि यह पत्रिका प्रत्येक स्कूल में पहुँचे। मुझे इसका दुख रहेगा कि यह पत्रिका मुझे सेवा निवृति के बाद पढ़ने के लिए मिली।

एस.पी. चन्द्रावल
इन्दौर, म.प्र.

द्विमासिक पत्रिका 'संदर्भ' शिक्षण और विज्ञान सम्बन्धी लेखों के लिए जानी जाती है। अंक-65 पढ़ा। अंक की सारी सामग्री पठनीय है।

मुकेश मालवीय जी का लेख 'मैं, मेरा घर, गाँव, स्कूल और किताबें' बेहद सीधी व सरल भाषा में लिखा गया एक उम्दा लेख है। जितेन्द्र ठाकुर द्वारा बनाए गए स्केच इसे और भी आकर्षण प्रदान कर रहे हैं।

पृष्ठ सात के पेरा तीन पर मुकेश जी लिखते हैं, "इस तरह पढ़ना एक आदत बन गई। बचपन में जिन किताबों से पढ़ने की नींव पड़ी वे अच्छी नहीं थीं पर यदि वो

माहौल नहीं मिलता तो अच्छी किताबों से मैं शायद ही जुड़ पाता।" इस बात से मुझे अपने बचपन के वो दिन याद आते हैं जब बड़े भाई-बहन घर में कॉमिक्स पढ़ा करते थे और मुझे पढ़ना नहीं आता था। कॉमिक्स या चित्रकथाएँ पढ़ना अच्छा होता है या बुरा, यह नहीं मालूम लेकिन पढ़ने के प्रति शुरुआती उत्सुकता कॉमिक्स ने ही जगाई थी। जब बड़े भाई-बहन कॉमिक्स पढ़ते थे तो हम उनके साथ बैठ जाते थे और उनसे ज़ोर-ज़ोर से पढ़ने को कहते थे ताकि हम भी सुन सकें; और धीरे-धीरे मैं उनके द्वारा पढ़े जाने वाले वाक्यों को रटने लगी थी। कॉमिक्स की बदौलत मैंने स्कूल में दाखिला लेने से पूर्व ही थोड़ा-थोड़ा पढ़ना शुरू कर दिया था। लोगों को पढ़ने के प्रति जागरूक करने के लिए उनमें पढ़ने की आदत डालना बहुत ज़रूरी है।

'बेंज़ीन की संरचना और केकुले का सपना' एक मज़ेदार लेख है जिसमें बेंज़ीन के बारे में विस्तार से समझाया गया है। सम्भवतः यह लेख विज्ञान की समझ रखने वालों के लिए ज़्यादा उपयुक्त है।

भाषा शिक्षण में बच्चों की मौलिक अभिव्यक्ति को स्थान दिया जाना चाहिए। 'स्वतंत्रता और सीखना' लेख में जितेन्द्र जी के ये विचार सार्थक हैं। लेख एकदम सरल भाषा में लिखा गया है जिसके बीच में बच्चों द्वारा लिखी हुई कहानियाँ अपने मूल रूप में प्रकाशित हैं। कहानियाँ पढ़ना काफी अच्छा लगता है लेकिन बच्चों की ग्यारह अभिव्यक्तियों को प्रकाशित करने की बजाए अगर दो या तीन को स्थान दिया जाता तो सम्भवतः एक और छोटे-से लेख को स्थान मिल सकता था। जितेन्द्र जी ने जिस बात की ओर ध्यान आकर्षित कराया है वह वास्तविकता बयान करती है। सच में बच्चे अपनी पाठ्यपुस्तकों से इतना अधिक ग्रस्त रहते हैं कि चाहते हुए भी अपने अनुभवों की मौलिक अभिव्यक्ति नहीं कर पाते।

महिला वैज्ञानिकों से परिचय कराने का स्तम्भ एक बहुत ही उपयोगी स्तम्भ है। इस अंक में हेमा रामचन्द्रन जी का साक्षात्कार प्रेरणादायक है। हर क्षेत्र में महिलाओं के साथ होने वाले भेदभावों पर उन्होंने ध्यान आकर्षित कराया है जैसे, "अरे! यह शहर से बाहर होने वाला सम्मेलन है, यह यहाँ शोधपत्र प्रस्तुत करने कैसे जा सकती है?" लेख का शीर्षक भी एकदम सटीक है।

'त्वरण, वेग और चाल' भौतिकी विषय से सम्बन्धित एक विस्तृत लेख है। जिस प्रकार इसको लिखने में एकाग्रता, परिश्रम और समझ की ज़रूरत रही होगी, ठीक उसी प्रकार इसको पढ़ने के लिए भी एकाग्रता और विज्ञान की गहरी समझ का होना आवश्यक है। सामान्य पाठकों के लिए यह लेख थोड़ा कठिन साबित हो सकता है।

'अपने पैरों पर खड़े होकर दिखलाओ' बहुत ही सुन्दर लेख है। इस छोटे-से लेख के साथ संलग्न माता ज़ेब्रा और शिशु ज़ेब्रा की तस्वीरें बहुत ही खूबसूरत हैं।

आज के समय में, जब लोग सोचने लगे हैं कि लड़कियों को पढ़ने के लिए

किसी भी परेशानी का सामना नहीं करना पड़ता, तब हेमलता जेम्स जी का साक्षात्कार बेहद प्रासंगिक है। लेख के साथ प्रकाशित रिनचिन और महीन द्वारा खींची गई तस्वीरें बहुत ही अच्छी हैं। हेमलता जी के विचार बहुत ही सुकूनदायक लगे जिसमें वे कहती हैं कि लड़कियों के स्कूली पोशाक पहनकर आने के प्रति वे बहुत सख्त हैं क्योंकि घरेलू पोशाकें उनकी आर्थिक स्थिति को उजागर करती हैं।

हमारे समाज में व्याप्त जातिवाद की गहरी जड़ों की ओर ध्यान आकर्षित करती कहानी 'स्कूल के दोस्त' इस अंक की सर्वाधिक पठनीय सामग्री है। 'संदर्भ' के पाठकों के अलावा सामान्य पाठकों को भी इस कहानी के लिए 'संदर्भ' अवश्य पढ़नी चाहिए। सौम्या अनन्तकृष्णा द्वारा खींची गई तस्वीरों के साथ आगे बढ़ती कहानी का हर पैरा दिल को छूता है। कहानी पठनीय होने के साथ-साथ विचारोत्तेजक भी है जैसे कहानी के एक अंश में ड्रेस का भेद खुल जाने पर सुवर्णा की माँ चीखती हैं, "उसकी पढ़ाई पर पत्थर पड़ें! उसने चार अक्षर क्या सीख लिए, वह तो ऊँच-नीच का भेद ही भूल गई। क्या.... खड़ी हो? इस पर मिट्टी का तेल डालो और आग लगा दो!" इस कथा को प्रकाशित करने के लिए सम्पादक मण्डल को धन्यवाद।

सम्पादक मण्डल ने हमेशा की तरह इस बार भी लेखों और कहानी के चयन में सतर्कता बरती है। आवरण बहुत ही आकर्षक और सुन्दर है। छपाई हमेशा की तरह इस बार भी साफ-सुथरी है।

नसीम अख्तर
भोपाल, म.प्र.

संदर्भ का नवीनतम अंक प्राप्त हुआ। पढ़ना शुरू किया ही था कि प्रसिद्ध विज्ञान लेखक गुणाकर मुले के निधन का समाचार मिला। अतः लिखने की आवश्यकता महसूस हुई। लम्बे समय से 'संदर्भ' को पत्र नहीं लिख पाया।

इस अंक में पाठकों की प्रतिक्रियाएँ न पाकर आश्चर्य हुआ कि ऐसा पहली बार हो रहा है। पत्रों के माध्यम से 'संदर्भ' के पाठक आपस में जुड़े रहते हैं और यह जुड़ाव बना रहना चाहिए। कभी-कभी लगता है कि कुछ चीज़ों पर प्रतिक्रिया देनी चाहिए जिसके लिए 'संदर्भ' को मैंने एक गम्भीर माध्यम माना है। मैं मानता हूँ कि यह एक विचारशील समूह के बीच की पत्रिका है जिसके गम्भीर सामाजिक सरोकार भी हैं। शिक्षा पर जैसी चेतना की आज आवश्यकता है वह ऐसे ही प्रयास से सम्भव है। कृपया हर अंक में कीमत बढ़ाकर 'संदर्भ' को आम पाठकों से दूर न करें।

कमलेश उप्रेती
नारायणनगर, पिथौरागढ़
उत्तराखण्ड